

निर्णय सुरक्षित किए जाने की तिथि 03.02.2026

निर्णय प्रदत्त तिथि 12.02.2026

उच्च न्यायालय इलाहाबाद

रिट - सी संख्या - 44707 of 2025

सुघर सिंह

.....याचिकाकर्ता(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व 5 अन्य

.....प्रतिवादी(गण)

याचिकाकर्ता(गण) के लिए

:

गिरीश चन्द्र मौर्य, ओमराज सिंह

अधिवक्ता

प्रतिवादी(गण) के लिए

:

मुख्य स्थायी अधिवक्ता, हरि नारायण सिंह,

अधिवक्ता

विमल कुमार

न्यायालय संख्या-6

माननीय न्यायमूर्ति प्रकाश पाड़िया

1. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता, प्रतिवादी संख्या 1, 2 व 3 की ओर से उपस्थित विद्वान स्थायी अधिवक्ता, प्रतिवादी संख्या 4 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री हरि नारायण सिंह तथा प्रतिवादी संख्या 5 व 6 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री विमल कुमार को सुना गया और रिकॉर्ड का अवलोकन किया गया।

2. वर्तमान रिट याचिका अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित प्रार्थनाओं के साथ दायर की गई है:-

C20240300003421) (सुघर सिंह बनाम इंद्रपाल व अन्य) में उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि व्यवस्था अधिनियम, 1950 की धारा 333 के तहत प्रतिवादी संख्या 2/अपर आयुक्त न्यायिक-प्रथम कानपुर, कानपुर परिक्षेत्र द्वारा पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 06.10.2025 के साथ-साथ वाद संख्या 1176/2018 (कम्प्यूटरीकृत वाद संख्या D201803390001176 (सुघर सिंह बनाम भूमि प्रबंधन समिति एवं अन्य) में उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि व्यवस्था अधिनियम, 1950 की धारा 198(4) के तहत प्रतिवादी संख्या 3/अपर जिलाधिकारी वित्त एवं राजस्व/अपर जिलाधिकारी कन्नौज द्वारा पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 8.10.2024 को मंसूख किए जाने हेतु उत्प्रेषण प्रकृति की एक रिट का आदेश या निदेश जारी किए जाए।"

3. रिट याचिका के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं कि ग्राम उम्मेदपुरवा मौजा अनौगी, परगना व तहसील एवं जिला कन्नौज में स्थित भूखंड संख्या 1560म क्षेत्रफल 0.121 हेक्टेयर राजस्व अभिलेख में बंजर भूमि के रूप में दर्ज है। रिट याचिका के पैरा-7 में कहा गया है कि प्रतिवादी संख्या 5 एवं 6 पर्याप्त कृषि भूमि होने के कारण उक्त भूखंड पर कृषि पट्टा आवंटित करने के पात्र नहीं हैं। याचिकाकर्ता का प्रश्नगत भूखंड पर अपने पैतृक काल से लेकर अभी भी कब्जा है और दिनांक 04.01.2014 को प्रतिवादी संख्या 5 एवं 6 के पक्ष में कृषि पट्टे के आवंटन के दौरान, ऐसी भूमि खाली नहीं थी क्योंकि याचिकाकर्ता की भूमि यानी प्लॉट संख्या 1562 व 1563 प्लॉट संख्या 1560 से लगी हुई है और याचिकाकर्ता ने प्लॉट संख्या 1560 पर घर का निर्माण किया है और उस पर अपनी कृषि भूमि की सिंचाई हेतु ट्यूबवेल लगा लिया है और इस पर कुछ पेड़ भी उगे हुए हैं।

4. यह तर्क दिया गया है कि चूंकि आवंटन के समय प्रश्नगत प्लॉट खाली नहीं था, इसलिए इसे निजी-प्रतिवादियों के पक्ष में आवंटित नहीं किया जाना चाहिए।

5. इसके दृष्टिगत, दिनांक 04.01.2014 को निजी-प्रतिवादियों के पक्ष में आवंटन किये जाने के उपरान्त उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि व्यवस्था अधिनियम की धारा 198(4) के अन्तर्गत पट्टा निरस्तीकरण हेतु वाद याचिकाकर्ता द्वारा जिला मजिस्ट्रेट (वित्त एवं राजस्व), जिला कन्नौज की अदालत में दायर किया गया था। उक्त वाद को प्रतिवादी संख्या 3 अर्थात् अपर

जिलाधिकारी वित्त एवं राजस्व/अपर जिलाधिकारी कन्नौज द्वारा आदेश दिनांक 08.10.2024 द्वारा खारिज कर दिया गया था।

6. उपरोक्त से व्यथित होकर, उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि व्यवस्था अधिनियम, 1950 की धारा 333 के तहत प्रदान किए गए वैधानिक पुनरीक्षण के तहत याचिकाकर्ता द्वारा प्रतिवादी संख्या 2 अर्थात् अतिरिक्त आयुक्त न्यायिक-प्रथम कानपुर परिक्षेत्र कानपुर के समक्ष दायर किया गया था जिसे वाद संख्या 3421/2024 के रूप में क्रमांकित किया गया था। उपरोक्त पुनरीक्षण को भी प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा आदेश दिनांक 16.10.2024 द्वारा खारिज कर दिया गया था। उपरोक्त से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने वर्तमान रिट याचिका दायर की है।

7. यह तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता का उस भूमि पर कब्जा है जो वर्ष 2014 में निजी-प्रतिवादियों के पक्ष में आवंटित की गई थी। जब न्यायालय द्वारा यह प्रश्न उठाया गया कि क्या किसी सक्षम प्राधिकारी द्वारा या राजस्व अधिकारियों द्वारा किसी भी समय कभी भी याचिकाकर्ता के पक्ष में कोई विधिक आवंटन किया गया था, तो यह बहुत ही उचित तर्क दिया गया कि किसी भी समय प्रश्नगत भूमि याचिकाकर्ता के पक्ष में आवंटित नहीं की गई थी।

8. उभय पक्षों के अधिवक्ता को सुना तथा अभिलेख का अवलोकन किया।

9. उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि व्यवस्था अधिनियम, 1950 की धारा 198 के तहत पट्टा निरस्तीकरण की पूरी प्रक्रिया प्रदान की गई है। अधिनियम, 1950 की धारा 198 की उप-धारा (4) इस प्रकार है:-

"(4) [कलेक्टर] [उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 20 1982 (18.08.1980 से लागू) द्वारा प्रतिस्थापित] भूमि के किसी प्रदेशन से क्षुब्ध किसी व्यक्ति के आवेदन पत्र पर ऐसे प्रदेशन के संबंध में नियत रीति से जांच करेगा और स्वप्रेरणा से भी ऐसी जांच कर सकता है और यदि उसका यह समाधान हो जाए कि प्रदेशन अनियमित है तो वह प्रदेशन और पट्टा, यदि कोई हो, निरस्त कर सकता है।"

10. रिट याचिका में दिए गए कथनों तथा पारित आदेश जिन्हें वर्तमान रिट याचिका में चुनौती

दी गई हैं, के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि अधिनियम, 1950 की धारा 198 की उप-धारा (4) के तहत याचिकाकर्ता द्वारा कार्यवाही शुरू की गई थी। धारा 198(4) के तहत कार्यवाही स्वप्रेरणा से या व्यथित व्यक्ति द्वारा शुरू की जानी चाहिए।

11. अभिलेख के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता व्यथित व्यक्ति की परिभाषा में नहीं आता है।

12. मुंशी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य, आर.डी. (117) पृष्ठ 615 में रिपोर्ट किए गए, में इस न्यायालय द्वारा यह प्रतिपादित गया कि व्यथित व्यक्ति वह व्यक्ति होना चाहिए जिसने कानूनी परेशानी झेली हो। मुंशी (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय के निर्णय का पैराग्राफ-16 इस उद्देश्य के लिए प्रासंगिक है और नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:

"बिंदु संख्या 2:- हालांकि मैं पहले ही अभिनिर्धारित कर चुका हूं कि राजस्व बोर्ड के विद्वान सदस्य द्वारा पारित आदेश क्षेत्राधिकार के बिना है, लेकिन एक पल के लिए मान लें कि पुनरीक्षण को बनाए रखना और उस पर निर्णय लेना उनके क्षेत्राधिकार के अंतर्गत था, फिर भी विद्वान सदस्य ने कोई भी कारण बताए बिना पट्टा निरस्तीकरण में त्रुटि की है। जहां तक राजस्व बोर्ड के विद्वान सदस्य द्वारा अपनाए गए रुख कि प्रतिवादी सं. 6 एक व्यथित व्यक्ति है का संबंध है, इस संबंध में विवाद अब और अधिक एकीकृत नहीं है क्योंकि शीर्ष न्यायालय के साथ-साथ इस न्यायालय ने निर्णयों की श्रृंखला में, इस बात पर विचार करते हुए कि किसे "व्यथित व्यक्ति" कहा जा सकता है, यह अभिनिर्धारित किया गया कि यद्यपि "व्यथित व्यक्ति" अभिव्यक्ति का अर्थ कानून के संदर्भ और मामले के तथ्यों के अनुसार भिन्न हो सकता है, फिर भी सामान्य रूप से, व्यथित व्यक्ति वह व्यक्ति होना चाहिए जिसने कानूनी परेशानी झेली हो; एक व्यक्ति जिसके विरुद्ध कोई निर्णय सुनाया गया है जिसने उसे किसी चीज़ से गलत तरीके से वंचित कर दिया है या किसी चीज़ को गलत तरीके से अस्वीकार कर दिया है, या किसी के प्रति उससे अधिकार को गलत तरीके से प्रभावित किया है।

एम.एस. जयराम बनाम उत्पाद शुल्क आयुक्त, केरल व अन्य, (2000) 7 एससीसी 552, में सर्वोच्च न्यायालय ने इस मामले पर विस्तार से विचार किया और अध्यक्ष, रेलवे बोर्ड व अन्य बनाम चंद्रिमा दास (श्रीमती) एवं अन्य, एआईआर 2000 एससी 988 सहित अपने पहले के कई निर्णयों पर जोर दिया; यह अभिनिर्धारित किया गया कि न्यायालय को सभी दृष्टिकोणों से अधिकार क्षेत्र के मुद्दे की जांच करनी चाहिए और याचिकाकर्ता को यह बताने के लिए कहा जाना चाहिए कि उसे क्या कानूनी क्षति पहुंची है।

शब्द "व्यथित व्यक्ति" पर संदर्भ: साइडबोथम, (1880) 14 अध्याय डी. 458 में भी विचार किया गया व परिभाषित किया गया। जिसमें निम्नानुसार देखा गया है:-

" 'व्यथित व्यक्ति' शब्द का मतलब वास्तव में एक ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसे उस लाभ से वंचित रखा गया हो जो उसे कोई अन्य आदेश दिए जाने पर मिल सकता था। एक 'व्यथित व्यक्ति' वह व्यक्ति होना चाहिए जिसने कानूनी परेशानी झेली हो, एक ऐसा व्यक्ति जिसके खिलाफ ऐसा निर्णय सुनाया गया हो जिसने उसे गलत तरीके से किसी चीज से वंचित कर दिया है या गलत तरीके से उसे कुछ देने से इनकार कर दिया है या किसी चीज पर उसके अधिकार को गलत तरीके से प्रभावित किया है।"

.....

.....

" व्यथित व्यक्ति" का अर्थ एक ऐसा व्यक्ति है जिसे गलत तरीके से उसके अधिकार से वंचित किया गया है जिसे प्राप्त करने का वह कानूनी रूप से हकदार है और इसमें किसी भी प्रकार की निराशा या व्यक्तिगत असुविधा शामिल नहीं है। " व्यथित व्यक्ति" का अर्थ एक ऐसा व्यक्ति है जो पीड़ित है या जिस पर

विधिक दृष्टि से प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। (के.एन. लक्ष्मीनरसिमैया बनाम सचिव, मैसूर एस.टी.ए.टी., (1966) 2 माइस. एल.जे. 199 में प्रतिपादित)।

साफ विधिक अर्थों में कोई व्यक्ति पीड़ित हुआ है या नहीं, इसका निर्धारण प्रत्येक मामले में शामिल तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए क्षति की प्रकृति से किया जाना चाहिए। एक काल्पनिक या भावनात्मक शिकायत व्यक्ति पर मुकदमा चलाने के लिए स्टैंडी प्रदान करने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकती है। क्षति या विधिक शिकायत अवश्य होनी चाहिए, क्योंकि कानून इसका अभिमूल्यन कर सकता है, न कि बिना आधार की इच्छा पर आधारित कोई कारण।

13. व्यथित पक्ष के पक्ष में अधिकार का अस्तित्व एक रिट याचिका को बनाए रखने का अधिकार क्षेत्र प्रस्तुत करता है जैसा कि **विनोय कुमार बनाम उ०प्र० राज्य व अन्य, (2001) 4 एससीसी 734** में रिपोर्ट किए गए मामले में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया:

"2. आम तौर पर, किसी व्यक्ति के पास रिट याचिका दायर करने का कोई अधिकार नहीं होगा यदि वह व्यक्तिगत रूप से आक्षेपित आदेश द्वारा प्रभावित नहीं है या उसके मौलिक अधिकारों पर न तो प्रत्यक्ष या पर्याप्त रूप से हनन किया गया है और न ही ऐसे अधिकारों के अतिक्रमित होने का कोई आसन्न खतरा है या लागू नियमों की अनदेखी करके उसके अर्जित हितों का उल्लंघन किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत राहत, क्षेत्राधिकार का आह्वान करने वाले व्यक्ति के पक्ष में अधिकार के अस्तित्व पर आधारित है। सामान्य नियम का अपवाद केवल उन मामलों में है जहां जिस रिट के लिए आवेदन किया गया है वह बंदी प्रत्यक्षीकरण या अधिकार-पृच्छा की रिट है या सार्वजनिक हित में दायर की गई है। यह समझदारी की बात है कि न्यायालय रिट क्षेत्राधिकार का प्रयोग उन मामलों तक ही सीमित रखती है जहां किसी व्यक्ति विशेष को विधिक क्षति या विधिक परेशानी हुई हो या उसके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन हुआ

हो, और तीसरे पक्ष के कहने पर व्यक्तिगत क्षति या परेशानी के मामलों पर विचार नहीं किया जाता है जहां एक प्रभावी विधिक सहायता संगठन मौजूद है जो ऐसे मामलों पर विचार कर सकता है। यहां तक कि जनहित में दायर मामलों में भी, न्यायालय किसी तीसरे पक्ष के कहने पर रिट क्षेत्राधिकार का प्रयोग तभी कर सकता है, जब यह दिखाया जाए कि विधिक क्षति या कानूनी चोट या अवैध बोझ का खतरा है और ऐसा व्यक्ति या व्यक्तियों का निर्धारित वर्ग गरीबी के कारण, असहायता या विकलांगता या सामाजिक या आर्थिक रूप से पिछड़े हुए होने की स्थिति के कारण राहत के लिए न्यायालय का दरवाजा खटखटाने में असमर्थ है।"

14. इसी प्रकार, **अयाऊबखान नूरखान पठान बनाम महाराष्ट्र राज्य व अन्य (2013) 4 एससीसी 465** में रिपोर्ट किए गए में सर्वोच्च न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि व्यथित पक्षों के प्रवर्तनीय अधिकारों का अस्तित्व इस न्यायालय में निहित भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण क्षेत्राधिकार को लागू करने की पूर्व शर्त है:

"9. यह एक स्थापित विधिक सिद्धान्त है कि किसी पर व्यक्ति को किसी भी कार्यवाही में हस्तक्षेप करने की अनुमति नहीं दी जा सकती, जब तक कि वह प्राधिकारी/न्यायालय को संतुष्ट न कर दे कि वह व्यथित व्यक्तियों की श्रेणी में आता है। केवल वही व्यक्ति जो विधिक क्षति से पीड़ित है, या पीड़ित हुआ है, विधि के तहत न्यायालय में अधिनियम/कार्यवाही/आदेश आदि को चुनौती पेश कर सकता है। संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक रिट याचिका या तो किसी वैधानिक या विधिक अधिकार को लागू करने के उद्देश्य से सुनवाई योग्य है, या जब अपीलकर्ता द्वारा यह शिकायत की जाती है कि अधिकारियों की ओर से वैधानिक कर्तव्य का उल्लंघन किया गया है। इसलिए, प्रवर्तन के लिए न्यायिक रूप से प्रवर्तनीय अधिकार उपलब्ध होना चाहिए जिसके आधार पर रिट क्षेत्राधिकार का सहारा लिया जाता है। निःसंदेह, न्यायालय किसी व्यक्ति की ओर से अपने रिट क्षेत्राधिकार का उपयोग करते हुए, किसी सार्वजनिक निकाय द्वारा वैधानिक कर्तव्य के प्रदर्शन को लागू कर सकता है, बशर्ते कि ऐसा व्यक्ति न्यायालय को संतुष्ट करता हो कि उसके पास इस तरह के प्रदर्शन पर जोर देने का विधिक अधिकार है। ऐसे अधिकार का अस्तित्व न्यायालयों के रिट क्षेत्राधिकार को लागू करने की एक शर्त है। ऐसे असाधारण क्षेत्राधिकार के प्रयोग में यह अंतर्निहित है कि जिस राहत की प्रार्थना की गई है वह विधिक अधिकार को लागू

करने के लिए होनी चाहिए। वास्तव में, ऐसे अधिकार का अस्तित्व, न्यायालय द्वारा उक्त क्षेत्राधिकार के प्रयोग की नींव है। जिस विधिक अधिकार को लागू किया जा सकता है, वह आम तौर पर स्वयं अपीलकर्ता का अधिकार होना चाहिए, जो इस तरह के अधिकार के उल्लंघन की शिकायत करता है और उसी के संबंध में राहत के लिए न्यायालय का दरवाजा खटखटाता है। [उड़ीसा राज्य बनाम मदन गोपाल रूंगटा [एआईआर 1952 एससी 12], सगीर अहमद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [एआईआर 1954 एससी 728], कलकत्ता गैस कंपनी (प्रो.) लिमिटेड बनाम पश्चिम बंगाल राज्य [एआईआर 1962 एससी 1044], राजेंद्र सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य [(1996) 5 एससीसी 460: एआईआर 1996 एससी 2736] तथा तमिलनाडु मर्केटाइल बैंक शेयरधारक कल्याण एसोसिएशन (2) बनाम एस.सी. शेखर [(2009) 2 एससीसी 784] देखें।]

10. "विधिक अधिकार" का अर्थ विधिक नियमों से उत्पन्न होने वाला अधिकार है। इस प्रकार, इसे विधि व्यवस्था द्वारा किसी व्यक्ति को दिए गए लाभ या हित के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। अभिव्यक्ति, "व्यथित व्यक्ति" में वह व्यक्ति शामिल नहीं है जो मनोवैज्ञानिक या काल्पनिक चोट से पीड़ित है; इसलिए, व्यथित व्यक्ति आवश्यक रूप से वही होना चाहिए जिसके अधिकार या हित पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा हो या खतरे में डाला गया हो। (शांति कुमार आर. कानजी बनाम होम इंश्योरेंस कंपनी ऑफ न्यूयॉर्क [(1974) 2 एससीसी 387: एआईआर 1974 एससी 1719] तथा राजस्थान राज्य बनाम भारत संघ [(1977) 3 एससीसी 592: एआईआर 1977 एससी 1361] देखें)

11. आनंद शरदचंद्र ओका बनाम मुंबई विश्वविद्यालय [(2008) 5 एससीसी 217: एआईआर 2008 एससी 1289] में, इस न्यायालय द्वारा एक समान दृष्टिकोण अपनाया गया था, यह देखते हुए कि यदि राहत का दावा करने वाला व्यक्ति दी गई आवश्यकता के अनुसार पात्र नहीं है तो उसे चुनाव या अन्य व्यक्तियों के चयन के संबंध में व्यथित व्यक्ति नहीं कहा जा सकता है।"

15. जसभाई मोतीभाई देसाई बनाम रोशन कुमार, हाजी बशीर अहमद 1976 (1) एससीसी 671 में रिपोर्ट किए गए मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि एक पर

व्यक्ति जो व्यथित व्यक्ति नहीं है उसकी उत्प्रेषण या परमादेश की रिट सुनवाई योग्य नहीं हो सकती है। उपरोक्त निर्णय का प्रासंगिक पैराग्राफ यहां पुनः प्रस्तुत किया गया है: -

"50. जबकि एक प्रोक्रस्टियन दृष्टिकोण से बचा जाना चाहिए, एक नियम के रूप में, न्यायालय को "पर व्यक्ति" के मामले पर हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जब तक कि सार्वजनिक हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाली गंभीर न्यायिक क्षति से जुड़ी असाधारण परिस्थितियां न हों। यह मानते हुए कि अपीलकर्ता एक "पर व्यक्ति" है और कोई व्यथित व्यक्ति नहीं है, तो भी वर्तमान मामले में ऐसी कोई असाधारण परिस्थितियाँ नहीं हैं जो उसके संदर्भ में उत्प्रेषण रिट के मामले को उचित ठहरा सकें। इसके विपरीत, उसके पक्ष में इन विवेकाधीन शक्तियों के प्रयोग का परिणाम कुल मिलाकर जनहित नीति के विरुद्ध होगा। यह इस व्यवसाय में स्वस्थ प्रतिस्पर्धा को खत्म कर देगा जो व्यावसायिक नैतिकता को बढ़ाने के लिए बहुत आवश्यक है; यह शहर में सिनेमा व्यवसाय पर अपीलकर्ता के एकाधिकार को कायम रखेगा और सबसे बढ़कर यह वास्तव में प्रतिवादी संख्या 1 और 2 के मौलिक अधिकारों को गंभीर रूप से नुकसान पहुंचाएगा, जो उन्हें संविधान के अनुच्छेद 19(1)(छ) के तहत "विधि द्वारा लगाए गए उचित प्रतिबंध" के तहत व्यापार या व्यवसाय जारी रखने के लिए मिला है।"

16. प्यारे लाल व अन्य बनाम उपनिदेशक चकबन्दी मैनपुरी व अन्य 2005 आल एल.जे. 1966

में रिपोर्ट किए गए मामले में जैसा कि पैरा-7 में प्रतिपादित किया गया है कि:-

"व्यथित शब्द का शाब्दकोषिक अर्थ है "हानि या क्षति सहा हुआ।" ब्लैक लॉ डिक्शनरी के अनुसार व्यथित पक्ष/व्यक्ति वह है जिसका विधिक अधिकार शिकायत किए गए किसी कार्य से अतिक्रमित हुआ है, या जिसका आर्थिक हित किसी डिक्री या निर्णय से प्रभावित हो रहा है। व्यथित शब्द एक महत्वपूर्ण शिकायत, कुछ व्यक्तिगत या संपत्ति के अधिकार से इनकार, या किसी पक्ष पर भार या दायित्व थोपने को संदर्भित करता है। कॉर्पस ज्यूरिस सेकुंडम वॉल्यूम IV 356 (प्रथम संस्करण) के अनुसार किसी पक्ष या व्यक्ति को किसी निर्णय से

केवल तभी व्यथित माना जा सकता है जब यह उसके व्यक्तिगत, आर्थिक या मालिकाना अधिकारों पर सीधे और हानिकारक प्रभाव डालता है।"

17. मामले के इस दृष्टिकोण में, चूंकि याचिकाकर्ता "व्यथित व्यक्ति" की परिभाषा में नहीं आता है, इसलिए उसकी ओर से दायर वर्तमान रिट याचिका सुनवाई योग्य नहीं है और खारिज किए जाने योग्य है।

18. तदनुसार, वर्तमान रिट याचिका **खारिज** की जाती है। लागत के विषय में कोई आदेश नहीं।

12 फ़रवरी 2026

स्वाति